THE TIMES OF INDIA

Date:22-07-23

A Job For GOI

Govt is withering away in Manipur. Centre must act fast

TOI Editorials

An essential feature of a state is that it has a monopoly over violence. This monopoly is tempered by an elaborate system of checks and balances to ensure that there's no arbitrariness or partisanship. Using this basic feature of a state as a benchmark, Manipur, yet again, failed the test on Friday when a mob burned down the house of a man alleged to have been part of a group that paraded two women naked. It's come after weeks of anarchy that keeps widening the ethnic fault line between Meiteis and Kukis. There's overwhelming evidence that the state in Manipur has withered away.

Consider what the National Commission for Women, a statutory body, said on Friday. Thrice they had reached out to Manipur authorities over instances of violence against women. Not once did they receive a reply. What should one make of CM Biren Singh's behaviour when home minister Amit Shah visited Manipur in end-May? A report in this paper said that Singh did not accompany Shah when he visited Kuki-dominated areas. It doesn't portray the picture of a CM in control. Moreover, the prolonged internet ban is a proxy admission of the collapse of credible policing.

Close to three months after trouble broke out, Manipur faces the daunting challenge of ending violence and finding ways to narrow the ethnic divide. On available evidence, this task is beyond Singh. The Constitution places GOI above states in the hierarchy of power and charges it with the task of protecting a state from internal disturbance. It's for GOI to bring about necessary changes in administration to first ensure that mobs don't take over the role of the state. That's a prerequisite to begin the process of healing. The ball's in GOI's court.

THE ECONOMIC TIMES

Date:22-07-23

China Plus One, Not Really Minus China

Accept it, India needs Chinese trade, investment

ET Editorials

World Bank president Ajay Banga's point that the postpandemic search for resilience in global supply chains provides India a window of between three and five years to cash in on the opportunity will be well received in policy circles. India has been preparing for this eventuality for a while now. It has, over the

past decade, cleaned up bad debts in the banking system, lowered corporate tax rates to internationally acceptable levels, diverted increasing chunks of the government budgets at building physical and digital infrastructure, and has rolled out incentives for local manufacturing and exports in select industries. India has the policy framework in place. It also offers a sizeable domestic market to swing corporate investment decisions in its favour.

But that is just half the story. The other half revolves around the US-China dynamic. US treasury secretary Janet Yellen described it as 'healthy economic competition that is not winner-takes-all but that, with a fair set of rules, can benefit both countries over time'. Companies seeking to build manufacturing capacity outside China will use this as a yardstick: the US is seeking diversification, not disengagement. Global supply chains will, thus, have deep linkages with Chinese manufacturing.

India has, however, become more protectionist in an attempt to build its domestic manufacturing base. New Delhi has turned its back on a regional FTA implemented by Beijing. It has also raised import duties. Both actions make it difficult to seize the 'China Plus One' opportunity within a narrow window. Apple's experience with exporting mobile handsets made by its contract manufacturer in India brings out this difficulty. It has had trouble seeding the ecosystem without help from Chinese vendors. To make the most of a structural shift in global manufacturing, India needs both trade and investment from China. The US is comfortable sharing technology with India. Converting itself into a manufacturing base would require another helping hand from its northern neighbour.

दैनिक भास्कर

Date:22-07-23

आवास योजनाओं के अमल में पीछे हैं राज्य की सरकारें

संपादकीय

केंद्र की तरह राज्यों की सरकारें भी जनता के वोट से बनती हैं। अगर केंद्र की सरकार अपने हिस्से का 60 प्रतिशत देकर राज्यों से मनुहार कर रही है कि वे गरीबों के लिए आवास बनवाएं और फिर भी देश के कुल 23 राज्य (केंद्र शासित राज्य सहित) कोताही करें तो यह अक्षम्य माना जाएगा। देश में करोड़ों लोग आज भी झुग्गी-झोपड़ियों में, फुटपाथों पर, फ्लाईओवर और पुल के नीचे और पेड़ों की ओट में सोने को मजबूर हैं। सरकार सामाजिक-आर्थिक जाति जनगणना (एसईसीसी) के तहत ऐसे लोगों को चिन्हित कर 1.20 लाख रुपए रुपए देकर 25 वर्ग मीटर में मकान बनवाती है। केंद्र की तमाम चेतावनी और डेडलाइन के बावजूद इन राज्यों ने अपने कोटा के मकान नहीं बनवाए। लिहाजा केंद्र ने बकाया सारी मकान आवंटन राशि एक राज्य (उप्र) को दे दी। दरअसल यह अकेला राज्य था, जिसने न केवल लक्ष्य को पूरा किया बल्कि और मकान बनवाने के लिए केंद्र सरकार को आवेदन किया था। हालांकि यह योजना आर्थिक-सामाजिक रूप से बेहद दुर्बल लोगों के लिए है, लेकिन यह भी देखने में आया कि कुछ राज्यों में जिन लोगों के नाम आलीशान

अट्टालिकाएं हैं। उन्हें इस योजना में मकान बनाने के लिए धनराशि मिली। जाहिर है राज्य के भ्रष्ट सिस्टम के कारण यह संभव हुआ होगा।

दैनिक जागरण

Date:22-07-23

बड़े खतरे से जूझता मणिपुर

डा. एलांगबम विजयलक्ष्मी, (लेखिका मणिपुर विश्वविद्यालय में एसोसिएट प्रोफेसर हैं)

मणिपुर में दो महिलाओं के साथ सार्वजनिक रूप से यौन हिंसा की अमानवीय घटना से पूरे देश में आक्रोश है। इस घटना के बाद राज्य में मैती एवं कुकी के बीच नए सिरे से तनाव भड़कने की आशंका है। मणिपुर में मैती और 34 जनजातियां सदियों से साथ रह रही हैं। मणिपुर मुख्य रूप से पर्वतीय राज्य है। मैदानी क्षेत्र के करीब 10 प्रतिशत में मैती और 90 प्रतिशत पहाड़ी क्षेत्र में जनजातियां रहती हैं। कई त्योहारों के संस्कार ऐसे हैं जो मैती और जनजातियों के प्रगाढ़ संबंधों को प्रमाणित करते हैं।

मैती शासन में उस समय परिवर्तन आया, जब 18वीं शताब्दी में राजा पामहैबा वैष्णव बन गए। परिणामस्वरूप अधिकांश मैती वैष्णव मतावलंबी हो गए। 1891 में अंग्रेजों के हाथों मणिपुर की पराजय हुई और फिर 1945 में वह द्वितीय विश्व युद्ध का साक्षी बना। इस युद्ध के बाद लोकतांत्रिक तरीके से महाराजा बोधचंद्र के नेतृत्व में मणिपुर एक्ट, 1947 बना। जब भारत आजाद हुआ, तब मणिपुर एक स्वतंत्र क्षेत्र था और उसका अपना संविधान था। द्वितीय विश्वयुद्ध के प्रभाव से मणिपुर की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियां बदलीं। 1949 में मणिपुर के महाराजा बोधचंद्र और भारत सरकार के बीच एक संधि के तहत मणिपुर स्टेट का भारत में विलय हुआ। 1956 में मणिपुर केंद्रशासित प्रदेश बना। 1972 में उसे पूर्ण राज्य का दर्जा मिला और 34 जनजातियों को अनुसूचित जनजाति की मान्यता मिली। मणिपुर में कुछ ऐसी जनजातियां भी हैं, जो अपने को न कुकी मानती हैं और न ही नगा। मणिपुर में इस्लाम मानने वाले भी हैं, जिन्हें मैती पांगल कहते हैं। नेपाल, बिहार के अलावा जैन समुदाय के लोग भी यहां हैं। नगा और मैती लोगों को ही मणिपुर का मूल निवासी माना जाता है। बाकी समुदाय यहां बाद में आए। कुकी लोगों का मणिपुर में आगमन 1844 से शुरू हुआ। कुकी बर्मा यानी म्यांमार से आकर यहां की पहाड़ियों में बसते रहे। उनका आगमन जारी है। जो कुकी मणिपुर आ चुके हैं, वे अपने लिए अलग स्थान और प्रशासन चाहते हैं। चूड़चंदपुर पर कुकी अपना दावा करते हैं, जबकि इसे मैती महाराजा चुड़ाचांद के नाम पर बसाया गया था। बाद में इस क्षेत्र से ही मैती लोगों को भागना पड़ा। मणिपुर में एक संप्रदाय का दूसरे से संघर्ष और सहअस्तित्व भी रहा है। 20वीं सदी के अंतिम दशकों में नगा-कुकी, मैती-मैती पांगल और कुकी-पाइते के बीच दंगे हुए। 1993 में नगा-कुकी के बीच हुए दंगों के बाद दोनों में समझौता मैती समुदाय ने कराया।

हाल में मणिपुर में मैती और कुकी के बीच सांप्रदायिक संघर्ष की शुरुआत 3 मई को तब हुई, जब आल ट्राइबल स्टूडेंट्स यूनियन ने मैती लोगों को जनजाति का दर्जा देने की पहल के खिलाफ रैली निकाली। चूड़चंदपुर की रैली में जब कुछ बंदूकधारी शामिल हो गए तब हिंसा भड़क उठी। इस हिंसा की एक वजह राज्य सरकार द्वारा पर्यावरण और वन रक्षा के लिए उठाए गए कदमों के साथ अफीम की खेती के विरुद्ध चलाया गया अभियान भी माना जा रहा है। इस अभियान से चूड़चंदपुर और काड़पोक्पी जिले में असंतोष उपजा। 28 अप्रैल को चूड़चंदपुर में मुख्यमंत्री को एक जिम के उद्घाटन के लिए आना था। इसके एक दिन पहले कुकी समुदाय के एक संगठन ने बंद की घोषणा कर दी और जिम को नष्ट कर दिया। इससे तनाव फैला। इसी तनाव के बीच हाई कोर्ट का यह आदेश आया कि सरकार मैती को जनजाति का दर्जा देने पर विचार करे। इससे माहौल और बिगड़ा। चूड़चंदपुर और मोरे में मैती लोगों पर हमले शुरू हो गए। उनके घर और मंदिर जलाए जाने लगे। हजारों मैती लोगों को भागना पड़ा। पुलिस हिंसक भीड़ को काबू नहीं कर पाई। मैती लोगों पर हमले की प्रतिक्रिया में इंफाल पूर्व-पश्चिम, विष्णुपुर, थौबाल आदि में चिन कुकी, मिजो, हमार लोगों के घर-दुकान लूटे-जलाए जाने लगे। बाद में मैती लोगों के गांवों पर पहाड़ों से गोलियां बरसाई जाने लगीं और पुलिस एवं सुरक्षा बलों पर भी हमले शुरू हो गए।

सवाल उठ रहे हैं कि सेना की मौजूदगी में भी हिंसा क्यों हो रही है? पुलिस और सुरक्षा बलों पर भी पक्षपात के आरोप लग रहे हैं। गृहमंत्री अमित शाह की चार दिवसीय मणिपुर यात्रा के बाद लोगों में आशा जगी कि अब हिंसा थम जाएगी, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। हिंसा के 39वें दिन राज्यपाल अनुसुइया उइके की अध्यक्षता में 51 सदस्यों की एक शांति समिति बनी। इसके सदस्यों में मतभेद के चलते इस समिति की एक बैठक तक नहीं हो पाई। हिंसा को लेकर राजनीति भी हो रही है। मणिपुर सरकार के 10 कुकी विधायक अलग प्रशासनिक व्यवस्था की मांग कर रहे हैं। कुकी लोगों का दावा है कि मैती संपन्न हैं और सरकारी नौकरियों में भी उनकी संख्या ज्यादा है, पर सच तो यह है कि कुकी लोगों की संख्या भी कम नहीं है।

मणिपुर में ड्रग्स का कारोबार खूब फैला है। यहां अफीम की बढ़ती खेती को देखते हुए लोगों को डर है कि कहीं मणिपुर ड्रग्स का गढ़ न बन जाए। एक डर म्यांमार से बड़ी संख्या में आ रहे कुकी लोगों को लेकर भी है। वे अफीम की खेती करते हैं। कुकी उग्रवादी संगठन म्यांमार से हेरोइन का व्यापार करने के लिए सीमावर्ती शहर मोरे पर कब्जा करने का प्रयास कर चुके हैं। म्यांमार का चिन नेशनल आर्मी उग्रवादी समूह भी मणिपुर के पहाड़ी जिलों और सीमांत इलाकों में बड़े पैमाने पर अफीम की खेती करता है। इंफाल के एक कुकी इलाके में ड्रग्स बनाने वाली एक मोबाइल लैब मिल चुकी है। ड्रग्स के कारोबार में राजनीतिक रूप से शक्तिशाली लोग भी संलिप्त हैं। इनमें से कुछ ऐसे हैं, जो बंदूकधारियों के सहारे चुनाव भी जीत जाते हैं। एक उग्रवादी समूह हथियारों के सहारे कुकी होमलैंड का सपना देख रहा है।

मणिपुर में तमाम लोग कुछ समय पहले अच्छी जिंदगी जी रहे थे, हिंसा के बाद अचानक सड़क पर आ गए हैं। कितनों ने अपनों को खोया है। हिंसा और तनाव के बीच म्यांमार से होने वाली घुसपैठ थमी नहीं है। कुकी समूहों के हथियारबंद तत्व अब भी बेकाबू हैं। मणिपुर की हिंसा देश की आंतरिक और बाहरी सुरक्षा के लिए बड़ा खतरा है। इसकी गंभीरता को समझने की जरूरत है। नहीं तो देर हो जाएगी।

Date:22-07-23

कृषि का कायाकल्प करेंगे ड्रोन

रमेश कुमार दुबे, (लेखक लोक नीति विश्लेषक हैं)

कुछ साल पहले तक खेती-किसानी की जरूरतों के लिए हम उपग्रहों से भेजी गई तस्वीरों पर निर्भर थे, लेकिन अब ड्रोन से यह काम और आसान हो गया है। ड्रोन से ली गईं तस्वीरें उपग्रहों से ली गई तस्वीरों की तुलना में ज्यादा सटीक भी होती हैं। इससे भी बड़ी बात यह है कि हम ड्रोन के जरिये छोटी-छोटी जगहों की तस्वीरें आसानी से ले सकते हैं। कृषि के लिए बेहद उपयोगी सिद्ध हो रहे ड्रोन जीपीएस आधारित नेविगेशन सिस्टम और सेंसर से लैस होते हैं। यह खेती में किसानों की मेहनत और समय दोनों की बचत करता है। फिलहाल कृषि ड्रोन का इस्तेमाल खेतों में उर्वरक, रसायनों और कीटनाशकों के छिड़काव में अधिक हो रहा है। एक कृषि ड्रोन मात्र 20 मिनट में करीब एक एकड़ खेत में कीटनाशकों का छिड़काव कर देता है। हाथ से कीटनाशकों के छिड़काव से न केवल अधिक मात्रा में छिड़काव हो जाता है, बल्कि उसकी मात्रा से पर्यावरण को भी नुकसान पहुंचता है। ड्रोन की ऐसी उपयोगिता को देखते हुए सरकार ने कुछ सीमाओं के साथ खेती में ड्रोन के उपयोग की अनुमति दे दी है। इसके लिए सरकार ने स्टैंडर्ड आपरेटिंग सिस्टम यानी एसओपी बनाया है। मोदी सरकार के डिजिटल इंडिया अभियान का एक उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में डिजिटल आधारभूत ढांचा तैयार करना है ताकि फसल मानचित्रण, मृदा परीक्षण और सिंचाई आदि में सूचना प्रौद्योगिकी का अधिकतम इस्तेमाल किया जा सके। इस साल के बजट में वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने कहा भी था कि समावेशी विकास के तहत सरकार फसल मूल्यांकन, भूमि अभिलेखों के डिजिटलीकरण और कीटनाशकों के छिड़काव के लिए किसान ड्रोन के उपयोग को बढ़ावा देगी।

मोदी सरकार कृषि बाजार के उदारीकरण के साथ ही खेती-किसानी में आधुनिक तकनीक को बढ़ावा देने की नीति पर काम कर रही है। कृषि ड्रोन से बीज रोपण से लेकर पानी और कीट प्रबंधन की सटीक जानकारी मिलेगी। कृषि ड्रोन सेंसर तकनीक और इंटेलीजेंस सिस्टम द्वारा बड़े क्षेत्र में कम समय में बीज रोपण कर देता है। रोपण प्रणाली वाले ड्रोन सीधे मिट्टी में बीज लगा सकते हैं। चूंकि ड्रोन फसलों में सही मात्रा में कीटनाशकों एवं उर्वरकों का छिड़काव करता है तो इससे भूमि की शुद्धता बनी रहती है और रसायनों के अधिक प्रयोग की आशंका समाप्त होती है। ड्रोन में लगे सेंसर उन क्षेत्रों की पहचान कर सकते हैं जो बहुत शुष्क होते हैं या जिनमें जलभराव की समस्या होती है। ड्रोन द्वारा सिंचाई की सही योजना बनाई जा सकती है। इसके साथ-साथ ड्रोन के द्वारा फसल की गुणवत्ता निगरानी, मृदा स्वास्थ्य की सटीक जानकारी सरलता से प्राप्त हो जाती है। कृषि ड्रोन दुर्गम एवं पहाड़ी क्षेत्रों में और अधिक क्षेत्रफल वाली भूमि की प्रभावी ढंग से देखरेख कर सकता है।

खेती की बढ़ती लागत और प्राकृतिक आपदाओं में बढ़ोतरी के कारण किसानों को नुकसान उठाना पड़ रहा है। ड्रोन फसलों को लेकर सही आकलन करता है। फसल नुकसान के दावों को जल्द निपटाने के लिए सरकार ने ड्रोन से सर्वे कराने का निर्णय लिया है। पीएम फसल बीमा योजना को प्रभावी तरीके से लागू करने के लिए प्रधानमंत्री मोदी ने तकनीक के अधिक से अधिक इस्तेमाल करने के निर्देश दिए है। इसी को देखते हुए कृषि सहित 12 मंत्रालयों का ड्रोन के अनिवार्य उपयोग के लिए चयन किया गया है। यूरिया के अंधाधुंध इस्तेमाल से न केवल जमीन बंजर हो रही है, बल्कि लोगों के स्वास्थ्य पर भी विपरीत असर पड़ रहा है। इसी को देखते हुए इफ्को ने नैनो यूरिया लांच किया है। इसमें 50 किलो के

एक कट्टे जितनी यूरिया 500 मिलीलीटर की बोतल में आ जाएगी। नैनो यूरिया के छिड़काव के लिए ड्रोन उपयोगी है। बोतलबंद तरल नैनो यूरिया एवं डीएपी के खेतों में छिड़काव के लिए सहकारी संस्था इफ्को ने 2,500 ड्रोन खरीदने का आर्डर दिया है। इन ड्रोन को चलाने के लिए 5,000 युवाओं को प्रशिक्षित किया जाएगा।

ड्रोन की ऊंची कीमत और किसानों की आर्थिक स्थिति को देखते हुए सरकार किसानों को ड्रोन खरीदने पर सब्सिडी दे रही है। यह सब्सिडी अनुसूचित जाति, जनजाति, छोटे एवं सीमांत किसानों, महिलाओं, पूर्वोत्तर के किसानों के लिए ड्रोन के खरीद मूल्य का 50 प्रतिशत या अधिकतम पांच लाख रुपये है। इसके अतिरिक्त ड्रोन खरीदने पर अन्य किसानों को 40 प्रतिशत या अधिकतम चार लाख और किसान उत्पादक संगठनों को 75 प्रतिशत तक अनुदान दिया जाएगा। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के संस्थानों, कृषि विज्ञान केंद्रों, राज्य कृषि विश्वविद्यालयों को ड्रोन खरीद हेतु 100 प्रतिशत तक सब्सिडी दी जा रही है। केंद्र सरकार ने कृषि मशीनीकरण पर उप-मिशन योजना शुरू की है। इसके तहत कृषि मंत्रालय ने कृषि ड्रोन की खरीद, किराए पर लेने और प्रदर्शन में सहायता करके इस तकनीक को किफायती बनाने के लिए दिशानिर्देश जारी किए हैं। सरकार ड्रोन की पहुंच बढ़ाने के लिए उड़ान संबंधी नियमों को भी आसान बना रही है। परिणामस्वरूप देश में ड्रोन का इस्तेमाल तेजी से बढ़ रहा है। फिलहाल ड्रोन उद्योग 5,000 करोड़ रुपये का है। वर्ष 2026 तक इसके 15,000 करोड़ रुपये तक पहुंचने का अनुमान है। सरकार ने ड्रोन एवं ड्रोन के कलपुर्जों के लिए उत्पादन से जुड़ी प्रोत्साहन योजना यानी पीएलआइ योजना भी शुरू की है। शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, रक्षा और अन्य क्षेत्रों में ड्रोन की उपयोगिता लगातार बढ़ रही है। इसी को देखते हुए मोदी सरकार भारत को ड्रोन विनिर्माण की धुरी बनाने में जुटी है। ड्रोन निर्माण के क्षेत्र में भारत के बढ़ते कदम से दुनिया को अवगत कराने के लिए आगामी 26-27 जुलाई को दिल्ली में इंटरनेशनल ड्रोन सम्मेलन का आयोजन किया जा रहा है।

जनसत्ता

Date:22-07-23

संजीदगी का सवाल

संपादकीय

मणिपुर में दो महिलाओं को निर्वस्त्र घुमाए जाने के मामले को सर्वोच्च न्यायालय ने जिस संजीदगी से लिया है, उससे एक बार फिर भरोसा बना है कि न्यायपालिका की अंतरात्मा सजग है। प्रधान न्यायाधीश और दो अन्य न्यायाधीशों की पीठ ने कड़े शब्दों में केंद्र और राज्य सरकारों को चेतावनी दी है। यहां तक कह दिया कि हम सरकार को कार्रवाई करने का थोड़ा वक्त देते हैं, वरना हम खुद कार्रवाई करेंगे। प्रधान न्यायाधीश ने कहा कि सांप्रदायिक टकराव के क्षेत्र में महिलाओं को वस्तु की तरह इस्तेमाल करना संविधान के खिलाफ है। सर्वोच्च न्यायालय ने इस मामले में सरकार की तरफ से की जा रही कार्रवाइयों की सूचना देते रहने को कहा है। मणिपुर मामले का अदालत ने स्वत: संज्ञान लिया था। अब देखना है कि केंद्र और राज्य सरकारों की उदासीनता किस रूप में भंग होती है। मणिपुर में हिंसक टकराव को ढाई महीने से ऊपर हो गए, मगर न तो केंद्र सरकार और न ही राज्य सरकार की तरफ से ऐसा कोई कदम उठाया जाता दिखा, जिससे लगे कि वे इस घटना को रोकने को लेकर गंभीर हैं। जिन दो महिलाओं को निर्वस्त्र घुमाने का वीडियो

प्रसारित हुआ, उसे हुए भी करीब ढाई महीने हो गए। हिंसा भड़कने के दूसरे दिन की ही यह घटना बताई जा रही है, मगर उसका वीडियो प्रसारित होने के बाद जब तीखी आलोचना शुरू हुई तभी सरकारों की कान पर जूं रेंगी।

जिन दोनों महिलाओं के साथ सामूहिक बलात्कार किया गया और उन्हें निर्वस्त्र घुमाते हुए बेशर्मी से छेड़खानी की जाती रही, उनका कहना है कि पुलिस ने ही उन्हें भीड़ के बीच छोड़ दिया था। दरअसल, हथियारबंद करीब एक हजार लोगों की भीड़ उन महिलाओं के गांव में घुस आई थी और लोगों को मारना और घरों में आग लगाना शुरू कर दिया था। तब पुलिस उन महिलाओं को अपनी गाड़ी में बिठा कर थाने ले जा रही थी। मगर रास्ते में जब भीड़ से सामना हुआ तो पुलिस ने उन्हें वहीं छोड़ दिया। यानी यह घटना पुलिस की जानकारी में थी। मगर ताज्जुब है कि उस पर पुलिस ने तभी कोई कार्रवाई करना जरूरी नहीं समझा और वीडियो प्रसारित होने के बाद उसकी प्राथमिकी दर्ज की गई और कथित आरोपियों को गिरफ्तार किया गया। सबसे हैरान करने वाला बयान तो वहां के मुख्यमंत्री का था, जिन्होंने घटना का वीडियो सामने आने पर कहा कि ऐसी घटनाएं तो यहां होती रहती हैं। सैकड़ों घटनाएं हो चुकी हैं, उनकी जांच चल रही है। यानी उनकी नजर में यह मामूली घटना थी। ऐसे में प्रधान न्यायाधीश की नाराजगी समझी जा सकती है।

केंद्र सरकार की तरफ से भी इस मामले में लगभग चुप्पी ही देखी गई। गृहमंत्री एक बार जरूर वहां गए थे, मगर कोई ऐसा सख्त कदम नहीं उठाया जा सका या हिंसा पर उतारू दोनों गुटों के बीच समझौते का कोई प्रयास नहीं किया गया, जिससे घटना पर काबू पाया जा सके। वहां के आयुधकोष से करीब चार हजार स्वचालित हथियार और भारी मात्रा में गोली-बारूद लूट लिया गया और वहां के सुरक्षाबल हाथ पर हाथ धरे बैठे रहे। मणिपुर हिंसा से जुड़े बहुत सारे सवाल हैं, जिनका जवाब सरकारों को देना है। ऐसे में प्रधान न्यायाधीश की सख्ती से उम्मीद बनी है कि अब वहां के लोगों के नारकीय बन चुके जीवन में कुछ सुधार आ पाएगा।

Date:22-07-23

चिंता का रुख

संपादकीय

सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों यानी एमएसएमई को देश की अर्थव्यवस्था की रीढ़ माना जाता है। समय-समय पर दुनिया भर में विपरीत हालात के दौर में भी भारत में स्थितियां नियंत्रण में रहीं, आर्थिक मोर्चे पर देश किसी गंभीर संकट में नहीं घिरा तो उसका मुख्य कारण छोटे उद्यमों से तैयार बुनियादी ढांचा रहा, जिसने संकट के उबरने में अहम भूमिका निभाई। लेकिन पिछले कुछ वर्षों से इस क्षेत्र में जिस तरह की समस्याएं खड़ी हुई हैं, उसने कई स्तर पर चिंता पैदा की है। गुरुवार को सरकार ने संसद में यह जानकारी दी कि बीते तीन सालों के दौरान करीब बीस हजार सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम या तो बंद हो गए या फिर उन्होंने काम करना बंद कर दिया। अकेले अप्रैल 2022 से मार्च 2023 तक तेरह हजार दो सौ नब्बे एमएसएमई बंद हो गए। एक साल में इतने बड़े पैमाने पर

छोटी औद्योगिक इकाइयों के बंद होने का तथ्य निश्चित रूप से परेशान करने वाला है। खासतौर पर इसलिए भी कि सरकार ने इस क्षेत्र को मजबूत करने पर अक्सर जोर दिया है और समय-समय पर इसे मजबूत बनाने के लिए आर्थिक सहायता की व्यवस्था करने की बात भी की है।

सवाल है कि छोटे उद्यमों की वजह से अर्थव्यवस्था में जीवन बने रहने की अहमियत के बावजूद यह स्थिति क्यों बन रही है कि देश के आर्थिक ढांचे में इस क्षेत्र की जगह लगातार सिकुड़ती जा रही है! हालांकि यह तथ्य है कि सरकार की ओर से जिन तीन सालों में इतने बड़े पैमाने पर छोटे उद्यमों के बंद होने की बात कही गई है, उसमें एक बड़ी भूमिका महामारी की वजह से लगाई गई पूर्णबंदी और उससे उपजे हालात की रही। उस दौर में सब कुछ बंद होने की स्थिति का सबसे बड़ा असर लघु स्तर पर चलने वाले व्यवसायों पर ही पड़ा, क्योंकि इनका संचालन करने वालों के पास कोई बड़ी पूंजीगत सुरक्षा नहीं होती और वे अपनी इकाइयों में रोजमर्रा के उत्पादन या कारोबार से नियमित स्तर पर होने वाली आय पर ही निर्भर रहते हैं। पूर्णबंदी के बाद हालात सामान्य होने में लंबा वक्त लग गया और ऐसे में बहुत सारे छोटे उद्यमी बड़े आर्थिक झटके को झेल पाने की स्थिति में नहीं रहे। यही वजह है कि सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योगों के क्षेत्र में इसका विपरीत प्रभाव पड़ा और बहुत सारे लोगों के सामने अपनी इकाइयां बंद करने के सिवा अन्य विकल्प नहीं बचे।

सवाल है कि अर्थव्यवस्था की संरचना में जिस एमएसएमई का इतना जरूरी योगदान रहा और जिसकी भूमिका को बेहद महत्त्वपूर्ण माना गया, खुद सरकार के स्तर पर इसे बढ़ावा देने की बात कही गई, उसे संकट में खत्म होने के लिए क्यों छोड़ दिया गया! गौरतलब है कि सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम मंत्रालय देश भर में एमएसएमई को ऋण और प्रौद्योगिकी सहायता, अवसंरचना व कौशल विकास के साथ-साथ प्रशिक्षण और बाजार सहायता के क्षेत्र में भी विभिन्न योजनाओं का कार्यान्वयन करता है। जाहिर है, इस समूचे क्षेत्र के महत्त्व को समझते हुए इसकी मजबूती के लिए संगठित स्तर पर प्रयास करने की व्यवस्था की गई है। लेकिन खासतौर पर पिछले तीन सालों के दौरान विश्व भर में खड़ी हुई असाधारण परिस्थितियों की सबसे गहरी मार छोटे उद्यमियों पर ही पड़ी। जबकि इसी दौर में शीर्ष उद्यमियों की स्थिति काफी मजबूत हुई। स्वाभाविक रूप से इस विरोधाभासी स्थिति पर सवाल उठेंगे। जरूरत इस बात की है कि आर्थिक मंदी या संकट के दौर में जिस तरह बड़े उद्योगों के लिए विशेष इंतजाम किए जाते हैं, वैसे ही देश की अर्थव्यवस्था में अहम योगदान देने और एक बड़ी आबादी को रोजगार देने और उनके जीवनयापन का जरिया होने के मद्देनजर छोटे उद्यमियों के लिए भी अलग से सहायता का प्रबंध किया जाए।

राष्ट्रीय सहारा

Date:22-07-23

त्वरित न्याय जरूरी

संपादकीय

महिलाओं पर यौन हमलों से वीडियो वायरल होने के बाद मणिपुर के हालात दुनिया के सामने आ चुके हैं। मैतई व कुकी समुदाय के बीच राज्य में हिंसक संघर्ष जारी है। इस खौफनाक वीडियो पर लोगों के गुस्से के बाद मुख्यमंत्री वीरेन सिंह ने मीडिया में बयान दिया कि ऐसे सैकड़ों मामले और भी हुए हैं। यह घटना चार मई की बताई जा रही है। जहां दो महिलाओं के कपड़े उतार कर सड़क पर दौड़ाया ही नहीं गया बल्कि उनके साथ बलात्कार भी हुआ। जिसकी 18 मई को एफआईआर दर्ज की गई। खबरें कह रही हैं, खास जातीय समूह की महिलाओं का चुन-चुन कर बलात्कार किया जा रहा है। वीडियो फैलने के बाद गुरुवार को प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने कहा कि उनका हृदय पीड़ा से भरा हुआ है। 65 दिनों बाद पहली बार उन्होंने इस घटना पर चुप्पी तोड़ी। प्रधानमंत्री का यह कहना कि देश की बेइज्जती हो रही है और दोषियों को बख्शा नहीं जाएगा। मुख्यमंत्री ने भी बाद में यह जोड़ा कि वे दोषियों को फांसी की सजा दिलवाएंगे। दरिंदगी भरे इस वीडियो को देखते ही जनता गुस्से से फूट पड़ी। लोगों ने इस पर न सिर्फ नाराजगी व्यक्त की बल्कि सरकार की तरफ से हो रही कोताही पर भी अनाप-शनाप बातें कीं। दरिदे जिस तरह युवती के अंगों को सरेआम नोच-खसोट रहे हैं, उसे देखकर रोंगटे खड़े हो जाते हैं। बलवा हो या युद्ध, महिलाओं को इसकी बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ती है। लेकिन हैरत हो रही है कि केंद्र सरकार द्वारा इस गंभीर स्थिति पर लगातार ढुलमुल रवैया अख्तियार किया गया। मुख्यमंत्री द्वारा बताई गई सैकड़ों भुक्तभोगी पीड़िताओं को न्याय दिलाने के लिए कौन आगे आएगा? इतनी फजीहत के बाद चार आरोपित ही पुलिस की पकड़ में आए हैं। उन खूंखार दरिंदों व बलवाइयों को आखिर जल्द से जल्द गिरफ्त में कैसे लाया जाएगा। हकीकत है कि यौन हिंसा की शिकार औरतें इस दर्द से ताउम्र नहीं निकल पातीं। उस पर इस तरह की जघन्य पीड़ा झेलने के बाद उन्हें सामान्य जीवन की तरफ कैसे लौटाया जा सकेगा। संसद का सत्र चालू होते ही इस मामले पर विपक्ष विफर गया, जिस पर बात करने की बजाए तीन दिन के लिए उसे स्थगित करना, घटना से ध्यान भटकाना है। यह घटना कतई आम नहीं है। इस जघन्यता पर त्वरित संज्ञान लेना होगा। इससे अंतरराष्ट्रीय पटल पर ही हमारी छवि नहीं धूमिल हो रही बल्कि महीनों से मचे उपद्रव के प्रति हो रही लापरवाही भी जाहिर हो रही है।

Date:22-07-23

बढ़ते बुजुर्गो के खतरे

सतीश सिंह

किसी भी देश में, बुजुर्गों की संख्या यानी 65 साल से अधिक आयु वाले लोगों की संख्या बढ़ने से बचत में कमी, श्रम शक्ति में गिरावट, निवेश के प्रतिफल में अपकर्ष और निवेश दर में कमी देखी जाती है। भारत, अमेरिका और चीन की तुलना में युवा देश है और आगामी दशकों में भी यह युवा बना रहेगा। वर्ष 2011 में बुजुर्गों की 5.5 फीसद की आबादी वर्ष 2050 तक बढ़कर 15.2 फीसद हो जाएगी, जबकि वर्ष 2050 में बुजुर्गों की आबादी चीन में 32.6 फीसद और अमेरिका में 23.2 फीसद हो जाएगी।

अमेरिका लंबी जीवन प्रत्याशा, कम जन्म दर, स्वास्थ्य देखभाल की बढ़ी लागत के कारण परेशान है, क्योंकि वहां सार्वजनिक स्वास्थ्य देखभाल व्यय में तेजी से इजाफा हो रहा है। इस वजह से वहां श्रमिकों की संख्या में भारी कमी आई है। कामगारों के लिए अमेरिका की निर्भरता दूसरे देशों पर बढ़ी है। उद्योग-धंधों पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ा है। बच्चे, किशोर एवं युवाओं के बीच एकाकीपन और अवसाद के मामले देखे जा रहे हैं। लंबे समय तक 1 बच्चे पैदा करने की नीति के कारण चीन में युवा आबादी की संख्या बहुत कम हो गई है और बुजुर्गों की संख्या में भारी इजाफा हुआ है। देश में श्रमिक बल के कम होने से देश की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति पर नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है। वर्ष 1980 में आबादी को नियंत्रित करने के लिए चीन ने एक बच्चे की नीति को लागू किया था। इस योजना को कड़ाई से लागू किया गया। इस क्रम में लोगों को नौकरी से बर्खास्त करने के अलावा महिलाओं का जबर्दस्ती गर्भपात भी कराया गया।

इस नीति की वजह से चीन की आर्थिक एवं सामाजिक संरचना में व्यापक बदलाव देखा जा रहा है। बच्चे निराशा और अवसाद के शिकार हो रहे हैं। संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या विभाग के मुताबिक अगली सदी में चीन की श्रमिक आबादी की जनसंख्या महज 54.8 करोड़ रह जाएगी। एक अनुमान के मुताबिक वर्ष 2030 तक चीन की आबादी में उम्र के अंतर के मामले में एक बड़ी खाई पैदा हो जाएगी। जाहिर है श्रमिक तबका में कमी आने से देश का बुनियादी ढांचा, जो विकास का वाहक होता है पर नकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। श्रमिक बल की कमी से सड़क, बिजली, स्वास्थ्य, शिक्षा, उद्योग, विनिर्माण आदि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। भारत के राज्यों में बुजुर्ग आबादी को लेकर जटिल स्थिति का निर्माण हो सकता है। आंकड़ों से पता चलता है कि कुछ राज्यों, जिसमें ज्यादातर दक्षिण भारत के राज्य शामिल हैं; में बुजुर्गों की आबादी में अप्रत्याशित वृद्धि सकती है। एक अनुमान के मुताबिक भारत की जनसंख्या वर्ष 2050 तक 178 करोड़ तक पहुंच सकती है, जबकि विश्व बैंक के अनुसार वर्ष 2050 तक भारत की आबादी 173 करोड़ होगी, जिसमें 27 करोड़ की आबादी बुजुर्गों की हो सकती है। राज्यवार देखने पर यह संख्या खतरनाक दिख रही है।

वर्ष 2050 तक 4 दक्षिणी राज्यों जैसे, आंध्र प्रदेश, केरल, कर्नाटक और तमिलनाडु में कुल आबादी का पांचवां हिस्सा बुजुर्ग आबादी का हो जाएगा। वहीं, महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल, ओडिशा आदि राज्यों में एक बड़ी आबादी बुजुर्गों की हो जाएगी, जिससे पूर्व और उत्तर पूर्व भारत से आगामी दशकों में श्रमिकों का निरंतर पलायन होगा, जैसा कि पिछले एक

दशक से इन राज्यों में हो रहा है। उत्तर प्रदेश, राजस्थान, असम, बिहार, हरियाणा आदि राज्यों में वर्ष 2050 में युवा आबादी की संख्या ज्यादा रहेगी, जिसके कारण इन राज्यों से दक्षिण के राज्यों में युवाओं का पलायन जारी रहेगा। ऐसे परिवर्तनों की वजह से दक्षिणी राज्यों के बुनियादी ढांचे पर भी दबाव बढ़ सकता है। 'जनसांख्यिकीय संकट' से बचने के लिए आंध्र प्रदेश ने लोगों को और अधिक बच्चे पैदा करने के लिए प्रोत्साहित करना शुरू कर दिया है। राज्य वार प्रति व्यक्ति आय के आंकड़ों से पता चलता है कि दक्षिणी राज्य, उत्तरी राज्यों की तुलना में अधिक समृद्ध हैं और दोनों क्षेत्रों की आय में व्यापक अंतर है। उदाहरण के लिए, कर्नाटक और बिहार के बीच प्रति व्यक्ति आय का अंतर 1.1 लाख रुपये है, वहीं कर्नाटक और औसत राष्ट्रीय आय के बीच लगभग 57,000 रुपये का अंतर है। वर्ष 2050 तक, दक्षिणी राज्यों में बुजुर्गों की आबादी बढ़ेगी, जिससे आय वितरण का अंतर और भी व्यापक होगा। कहा जा सकता है कि भारत में जनसांख्यिकीय बदलाव एक बड़े संकट की ओर इशारा कर रहा है, जिस पर समय रहते कार्रवाई करने की जरूरत है।

समग्रता में भले ही इसका असर आर्थिक एवं सामाजिक परिप्रेक्ष्य में दृष्टिगोचर नहीं हो रहा है, लेकिन इसका दूरगामी प्रभाव पड़ने से इनकार नहीं किया जा सकता है, क्योंकि जैसे-जैसे लोगों की आयु बढ़ती है, बचत में वृद्धि देखी जाती है, लेकिन ज्यादा उम्र होने पर स्वास्थ्य व्यय में वृद्धि होती है। बचत में कमी आने से राज्यों के घरेलू उत्पादों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। जनसांख्यिकीय आंकड़ों के विश्लेषण से पता चलता है कि वर्ष 2050 तक आंध्र प्रदेश में बुजुर्गों की 30.1 फीसद की आबादी देश में सबसे अधिक होगी। मामले में केरल 25.0 फीसद, कर्नाटक 24.6 फीसद, तमिलनाडु 20.8 फीसद, हिमाचल प्रदेश 17.9 फीसद आदि की आबादी के साथ क्रमशः दूसरे, तीसरे, चौथे और पांचवें स्थान पर होगा, जबकि वर्ष 2050 में बुजुर्गों की 9.8 फीसद की सबसे कम आबादी हरियाणा में होगी। वैसे, युवा आबादी के संबंध में वर्ष 2050 में बिहार, उत्तर प्रदेश, असम, छत्तीसगढ़, राजस्थान, झारखंड, मध्य प्रदेश, गुजरात, उत्तरांचल आदि राज्य बेहतर स्थिति में रहेंगे।

बदलती जनसांख्यिकीय प्रवृति को दृष्टिगत करते हुए देश के राज्यों को नीति बनाने एवं उस पर अमल करने की जरूरत है। जिन राज्यों में युवा आबादी है, उन्हें अम केंद्रित उद्योग स्थापित करना चाहिए, जबकि जिन राज्यों में बुजुर्गों की ज्यादा आबादी है, उन्हें सेवानिवृत्ति की आयु में बढ़ोतरी करने की नीति पर आगे बढ़ने की जरूरत है। हालांकि, भारत की सामाजिक एवं आर्थिक नीति चीन एवं अमेरिका से इतर है। फिर भी हमारे देश में आम लोगों के अनुकूल नीति बनाई जा सकती है। फिलहाल, देश में राजनेता 70 से 80 वर्ष की आयु में भी पूरे दम-खम के साथ काम कर रहे हैं। अगर राज्यों में जनसांख्यिकीय बदलाव की प्रवृत्ति के अनुसार नीति बनाई जाए तो इस मोर्चे पर कुछ बेहतर परिणाम निकलने की जरूर उम्मीद की जा सकती है।

Live हिन्दुस्तान.com

Date:22-07-23

त्वरित न्याय के लिए

संपादकीय

भारतीय अदालतों में लंबित मामलों की संख्या पांच करोड़ से ऊपर जाने लगी है, तो यह चिंताजनक है। राज्यसभा में एक लिखित जवाब में केंद्रीय विधि मंत्री अर्जुन राम मेघवाल ने बताया है कि भारतीय अदालतों में लंबित मुकदमों की संख्या 5.02 करोड़ से ज्यादा हो गई है। लंबित मामले हमारे लिए निरंतर चिंता का विषय बने हुए हैं। अकेले सुप्रीम कोर्ट में लंबित मामलों की संख्या 69,766 हो गई है। एक अनुमान के अनुसार, भारत में दस में से नौ मामले अदालतों में लंबित रहते हैं। केवल दस प्रतिशत मामलों में ही त्वरित कार्यवाही चल पाती है। आखिर इतने मामले क्यों लंबित हैं? इसका एक पहलू यह भी है कि लोग पहले की तुलना में अपने अधिकारों को लेकर ज्यादा सजग हुए हैं, इसलिए अदालत पहुंचकर अपना अधिकार लेने की चेष्टा कर रहे हैं। वैसे बढ़ती जागरूकता जहां अच्छी बात है, वहीं मामलों का लंबित रहना बड़ी चिंता की बात है। ध्यान रहे, लोग न्याय की प्रत्याशा में ही अदालत का रुख करते हैं। ऐसे में, अगर उन्हें जल्दी न्याय नहीं मिलेगा, तो वे दूसरे रास्ते अपनाएंगे, जो देश में कानून-व्यवस्था की सेहत के लिए ठीक बात नहीं होगी।

लंबित मामलों पर चिंता पहले भी कई बार उठी है। पिछले वर्ष जुलाई में भारत के प्रधान न्यायाधीश एन वी रमन्ना ने देश में ज्यादा लंबित मामलों पर तत्कालीन कानून एवं न्याय मंत्री किरेन रिजिजू द्वारा व्यक्त की गई चिंताओं का जवाब देते हुए कहा था कि न्यायिक रिक्तियों को न भरना इसका प्रमुख कारण है। तब भी यह चिंता जताई गई थी कि लंबित मामलों की संख्या पांच करोड़ को पार करने वाली है, पर अब जब वाकई पार कर गई है, तो सभी संबंधित पक्षों को सजग हो जाना चाहिए। लंबित मामलों को जल्द से जल्द न्याय तक पहुंचाने के लिए सरकार और न्यायपालिका के बीच अच्छा समन्वय होना चाहिए। पिछले साल ही देश के प्रधान न्यायाधीश ने केंद्रीय मंत्री को कह दिया था कि न्यायिक रिक्तियों को भरना और न्यायिक बुनियादी ढांचे में सुधार करना जरूरी है। क्या विगत एक वर्ष में इस दिशा में गंभीरता से काम हुआ है? दिसंबर 2022 तक देश के 25 उच्च न्यायालयों में जजों की संख्या होनी चाहिए थी 1,108, पर जज थे 778 कुल। निचली अदालतों की बात करें, तो जजों के पद थे 24,631 और जज थे 19,288 मात्र। इतने पद खाली कैसे हैं? आज जरूरत समग्रता में सोचने की है।

मुकदमों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है। जैसे, बताया जा रहा है, मणिपुर में ही 3 मई के बाद हुए दंगों के चलते 6,000 से अधिक एफआईआर दर्ज हुए हैं, इनमें से ज्यादातर मामले अदालतों में जाएंगे और दोषियों को सजा मिलने में न जाने कितना समय लगेगा? यदि मणिपुर में तत्काल प्रभाव से कानून का राज कायम करना है, तो अदालतों को भी त्वरित न्याय करना होगा। अपराधी लंबित मामलों में अपने बचाव की गुंजाइश देखते हैं, जबकि पीड़ित को सालों बाद जब न्याय मिलता है, तो न्याय अपना महत्व लगभग खोकर समाज में अन्याय को बढ़ावा देता है। त्वरित न्याय पूरी व्यवस्था की जिम्मेदारी है। न्याय और वह भी त्वरित न्याय का माहौल बनाने की कोशिश में हम चीन जैसी तानाशाही व्यवस्था का अनुसरण नहीं कर सकते, पर अपनी लोकतांत्रिक सीमाओं में रहते हुए न्यायिक प्रक्रिया को तेज करने के हरसंभव उपाय तो कर ही सकते हैं। भारत जैसी विशाल आबादी वाले देश-समाज में अमन-चैन के लिए यही होना चाहिए।